RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18, अंक-1, दिसम्बर 2024 जनवरी फरवरी 2025

रासो
त्रैमासिक शोध पत्रिका
2005
॥ स्वस्ति पन्थामनु चरेम् ॥

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18 अंक - 1 दिसम्बर-2024, जनवरी-फरवरी-2025

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टिट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक और वेदवाणी मासिक पत्रिका-एक ऐतिहासिक विवेचन

डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

पं. युधिष्ठिर मीमांसक स्वतंत्र भारत के महत्वपूर्ण वैदिक-विचारक और गवेषक रहे, जिनका 'वेदवाणी' मासिक पत्रिका से विशेष जुड़ाव रहा। यह पत्रिका 1948 में पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु ने स्थापित की थी और प्रारम्भ से ही वैदिक चिंतन, आर्य समाज तथा सांस्कृतिक पुनर्जागरण की मुखर वाहक रही। जिज्ञासु के निधन के बाद इसका सम्पादन मीमांसक ने संभाला और पत्रिका ने एक नए विद्वत् युग में प्रवेश किया। उनके नेतृत्व में वेदवाणी के कई विशेषांक प्रकाशित हुए, जिनमें वैदिक वाङ्मय के भाषाशास्त्रीय, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और दार्शनिक पक्षों को उजागर किया गया। मीमांसक के निरंतर सम्पादकीय लेख तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक प्रश्नों, वैदिक साहित्य की प्रामाणिकता और आर्य समाज के विचार-स्रोतों पर गहन शोधपूर्ण दृष्टि प्रस्तुत करते रहे।

वेदवाणी मासिक पत्रिका का इतिहास वस्तुतः आधुनिक वैदिक पत्रकारिता का इतिहास है। भारत की स्वतंत्रता के शीघ्र पश्चात्, जब राष्ट्र अपनी सांस्कृतिक पहचान को पुनर्जीवित करने का प्रयास कर रहा था, तभी सन 1948 में पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु ने वेदवाणी का प्रारम्भ किया। यह केवल एक पत्रिका नहीं थी, बल्कि वैदिक विचारधारा, आर्य समाज के आदर्शों, प्राचीन वाङ्मय की पुनर्व्याख्या और समसामयिक परिदृश्यों की वैचारिक पड़ताल का एक जीवंत मंच थी। इसके संस्थापक-संपादक जिज्ञासु जी ने इसे वैदिक साहित्य और आधुनिक भारतीय समाज के बीच एक सेतु के रूप में विकसित किया।

पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु के देहावसान के पश्चात् वेदवाणी का दायित्व जिस व्यक्तित्व ने संभाला, वह था—पं. युधिष्ठिर मीमांसक। उनके संपादकत्व में वेदवाणी न केवल वैचारिक रूप से समृद्ध हुई, बल्कि शोधपरकता, प्रामाणिकता और वैदिक अध्ययन के गहन दृष्टिकोण से परिपूर्ण हो उठी। उन्होंने अपने नियमित सम्पादकीयों में केवल तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं पर ही नहीं लिखा, बल्कि वैदिक परम्परा, आर्य समाज के आन्दोलन, भाषाशास्त्र, संस्कृति, दर्शन, इतिहास तथा वैदिक वाङ्मय के विभिन्न पक्षों पर अत्यंत विद्वतापूर्ण और विश्लेषणपरक सामग्री प्रस्तुत की।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक का सम्पादकत्व वेदवाणी के लिए उस काल का स्वर्णयुग था। उन्होंने पत्रिका को केवल लेख-संग्रह नहीं रहने दिया, बल्कि इसे एक निरंतर चलने वाले वैदिक विमर्श का केन्द्र बना दिया। उनके संपादन में प्रकाशित वार्षिकांक और विशेषांक अपने-आप में शोधग्रंथों के समान हैं, जिनमें वैदिक साहित्य, शास्त्रीय परम्परा, आर्य समाज का इतिहास, दार्शनिक चर्चाएँ और अनेक अप्रकाशित तथ्यों

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

का उद्घाटन किया गया।

उनके सम्पादन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह रही कि उन्होंने विभिन्न विधाओं के विद्वानों, आचार्यों, शोधकर्ताओं और आर्य समाज के कर्मठ कार्यकर्ताओं को वेदवाणी के माध्यम से एक मंच पर संगठित किया। सैकड़ों विद्वानों के लेख जो आपने सूचीबद्ध किए हैं, वास्तव में वेदवाणी की उस विशाल बौद्धिक परम्परा को दर्शाते हैं, जिसके केन्द्र में मीमांसक जी थे।

आपके द्वारा सूचीबद्ध किए गए सौ से अधिक विद्वानों, शास्त्रियों, आचार्यों, प्रोफेसरों और संन्यासियों ने 'वेदवाणी' में अपने शोधपूर्ण लेख भेजे। यह केवल एक सूची नहीं बल्कि 'वेदवाणी' की बौद्धिक प्रतिष्ठा और पं. मीमांसक की सम्पादकीय क्षमता का प्रमाण है। इन विद्वानों में— पं. प्रियव्रत वेदवाचस्पति, पं. मदनमोहन विद्यासागर, डॉ. रामशंकर भट्टाचार्य, गोपाल शास्त्री 'दर्शन-केसरी', आचार्य धर्मदेव विद्यामार्तंड, पं. भगवतदत्त वेदालंकार, डॉ. भवानीलाल भारतीय, स्वामी वेदानन्द सरस्वती, पं. उदयवीर शास्त्री, प्रो. विश्वनाथ वेदालंकार, आर्य समाज के प्रमुख तपस्वी संन्यासी जैसे प्रतिष्ठित नाम शामिल हैं।

यहाँ वैदिक व्याकरणाचार्य, इतिहासकार, वैदिक आचार्य, आधुनिक शिक्षाविद, आर्य समाज के संन्यासी, समाज-सुधारक, निबंधकार, कवि और भाषावैज्ञानिक, आयुर्वेदाचार्य, लोक-जीवन और संस्कृति के शोधकर्ता, सभी ने अपने-अपने दृष्टिकोण से सामग्री दी।

इन प्रतिष्ठित विद्वानों की लेखमाला से यह स्पष्ट होता है कि पं. युधिष्ठिर मीमांसक विद्वानों के लिए एक विश्वसनीय सम्पादक थे। वे लेखों की शास्त्रीयता, सन्दर्भ-सटीकता और भाषाई पवित्रता को कठोरता से बनाए रखते थे। वेदवाणी एक विद्वत् संवाद एवं वैचारिक विमर्श का राष्ट्रीय मंच बन गयी।

उन्होंने केवल लेख संकलित नहीं किए, बल्कि प्रत्येक विषय पर सुविचारित भूमिका, संदर्भात्मक टीकाएँ, शास्त्रीय तर्क, और ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत कर स्वयं भी एक विशाल साहित्य रच दिया।

उनके सम्पादकीय लेखों से यह पहचान मिलती है कि वे न केवल वेद, उपनिषद और शास्त्रों के गहन अध्येता थे, बल्कि इतिहास, समाजशास्त्र, राजनीति, संस्कृति, दर्शन और धर्मशास्त्र के भी धुरंधर विवेचक थे।

इन लेखों द्वारा पं. युधिष्ठिर मीमांसक की संपादकीय क्षमता स्पष्ट होती है। इतनी विविध सामग्री को समन्वित करना, उसे शोधपरक ढाँचे में प्रस्तुत करना, और उससे वैदिक विमर्श को सशक्त दिशा देना— उनकी मौलिकता, बौद्धिकता और सृजनशीलता का प्रमाण है।

मीमांसक जी ने अपने हर सम्पादकीय में समसामयिक समस्याओं का समाधान वैदिक दृष्टि से प्रस्तुत किया। वे सामाजिक-धार्मिक कुरीतियों, भाषा-समस्याओं, सांस्कृतिक संकटों, शिक्षा-पद्धति, राष्ट्रवाद और स्वदेशी के सिद्धान्तों पर गहरी पकड़ रखते थे। उनका लेखन न तो रूढ़िवादी था और न केवल परम्परा का यांत्रिक पुनरावर्तन—बल्कि आधुनिक समय की आवश्यकताओं के अनुरूप उसका विवेकपूर्ण पुनर्पाठ था।

वास्तव में वेदवाणी मीमांसक जी के समय में एक चलता-फिरता वैदिक विश्वविद्यालय बन चुकी थी। इसमें— शोधपरक लेख, आलोचनात्मक निबंध, इतिहास-पुनर्निर्माण, वैदिक प्रयोगों का वर्णन, साहित्यिक

समीक्षाएँ, आर्य समाज के घटनाचक्र का दस्तावेजीकरण, सभी कुछ अत्यंत उच्च स्तर पर प्रकाशित होता था।

उनके द्वारा संगृहीत और संपादित लेखों की लंबी श्रृंखला दर्शाती है कि वेदवाणी किसी एक व्यक्ति की पत्रिका नहीं थी, बल्कि एक सम्पूर्ण वैदिक बौद्धिक आन्दोलन थी।

इन सभी सामग्री को पढ़कर स्पष्ट होता है कि पं. युधिष्ठिर मीमांसक गहरे अध्ययनशील, प्रखर विचारक, भाषाशास्त्र के मर्मज्ञ, वैदिक परम्परा के अन्वेषी और संगठनशील संपादक थे। उनकी दृष्टि शोधपूर्ण थी, उनके लेखन में निर्णायकता थी और संपादन में समन्वय की अद्भुत क्षमता थी। इसीलिए वेदवाणी में प्रकाशित प्रत्येक लेख के पीछे उनकी बौद्धिक छाया दिखाई देती है।

वेदवाणी मासिक सम्पादकीय व्यक्तित्व

वेदवाणी मासिक में पं. युधिष्ठिर मीमांसक का सम्पादकीय व्यक्तित्व अत्यन्त व्यापक, शोधनिष्ठ, ऐतिहासिक दृष्टि-सम्पन्न और वैदिक परम्परा की गहन समझ से युक्त दिखाई देता है। उनके सम्पादकीय केवल समसामयिक घटनाओं और आर्य समाज से सम्बन्धित समाचारों तक सीमित नहीं थे, बल्कि वे वैदिक साहित्य, आर्य समाज के इतिहास, दयानन्द साहित्य, श्रौत परम्परा, वैदिक अनुष्ठानों तथा आधुनिक परिवर्तनों के बीच समन्वय स्थापित करने वाला एक महत्त्वपूर्ण बौद्धिक मंच भी थे।

मीमांसक जी का दृष्टिकोण हमेशा तथ्यों के गहरे अध्ययन और प्रामाणिक स्रोतों की खोज पर आधारित रहा। उदाहरण के लिए, ऋषि दयानन्द के पत्रों और विज्ञापनों के नये संस्करणों पर उनकी आलोचना केवल शब्दों का मूल्यांकन नहीं थी, बल्कि ऐतिहासिक साक्ष्यों की पुन:स्थापना, तथ्यगत भ्रमों का परिमार्जन और प्राचीन दस्तावेजों के आधार पर सत्य पुनर्गठन का एक विद्वतापूर्ण प्रयास थी। वे यह मानते थे कि दयानन्द के पत्र केवल व्यक्तिगत संवाद नहीं हैं, बल्कि आर्य समाज के इतिहास, सुधारवादी विचारधारा, वैदिक पुनरुद्धार और सामाजिक नवचेतना के मूल स्रोत हैं। इसलिए उन्होंने अपने सम्पादकीयों में 1950 के दशक से 1980 तक उपलब्ध विभिन्न अभिलेखों, चित्रों और पत्रों की खोज में लगे विद्वानों के प्रयासों को भी विशेष स्थान दिया।

स्वामी गंगेश्वरानन्द के शताब्दी समारोह पर उनकी टिप्पणी उनके वैदिक अध्ययन के प्रति सम्मान और वैदिक विद्वानों की परम्परा के प्रति गहरी श्रद्धा को प्रदर्शित करती है। उन्होंने शताब्दी समारोह को केवल एक आयोजन नहीं माना, बल्कि इसे वैदिक परम्परा की अखण्ड ज्योति का प्रतीक बताया, जो पिछले सौ वर्षों में निरन्तर प्रज्वलित रही है। वे यह भी बताते हैं कि गंगेश्वरानन्द जैसे तपस्वी विद्वान आधुनिक युग में वैदिक विद्याओं की चेतना को पुनर्जीवित करने वाले प्रकाशस्तम्भ थे।

सन् 1982 के अपने सम्पादकीय में उन्होंने इस तथ्य को गम्भीरता से रेखांकित किया कि स्वामी दयानन्द के 26 पत्र उपलब्ध होने और उनकी मूल फोटो प्रतियों के प्राप्त होने से दयानन्द के विचारों और घटनाक्रमों का प्रामाणिक ऐतिहासिक पुनर्निर्माण सम्भव हुआ है। मीमांसक जी यह मानते थे कि प्रत्येक मूल दस्तावेज, चाहे वह पत्र हो, विज्ञापन हो या बयान, आर्य समाज के इतिहास का अनिवार्य स्तंभ है, और इनके आधार पर ही सम्यक् ऐतिहासिक लेखन सम्भव होता है। वे इसके माध्यम से यह भी दर्शाते हैं कि आर्य समाज के अनेक विवाद, भ्रांतियाँ और ऐतिहासिक उलझनें केवल दस्तावेजों की अनुपलब्धता के कारण बढ़ीं, जिन्हें मूल स्रोतों से स्पष्ट किया जा सकता है।

हैदराबाद में हुए दशम आर्य महासम्मेलन पर उनकी समीक्षा यह दर्शाती है कि मीमांसक जी के लिए सम्पादकीय मात्र विचार-प्रस्तुति का मंच नहीं था, बल्कि वह उनके लिए आर्य समाज के कार्यों का विश्लेषण, मूल्यांकन और दिशा-निर्देश देने का माध्यम भी था। उपदेशक महाविद्यालय पर उनकी टिप्पणी आधुनिक भारत में वैदिक उपदेशकों की आवश्यकता, प्रशिक्षण पद्धति और आर्य समाज के भविष्य की दृष्टि को स्पष्ट करती है।

वेदवाणी के एक अन्य अंक में उन्होंने पं. भगवतदत्त जी के निधन पर विस्तृत सम्पादकीय लिखकर यह संकेत दिया कि वे केवल विषयों का नहीं, बल्कि व्यक्तित्वों का भी मूल्यांकन करने में पारदर्शी थे। उन्होंने भगवतदत्त जी के कार्य, लेखन और योगदान को इस प्रकार प्रस्तुत किया कि पाठक के सामने उस विद्वान की सम्पूर्ण बौद्धिक और सामाजिक छवि उभर आती है।

पं. धर्मदेव जी 'विद्यामार्त्तण्ड' के अगमर्षण संज्ञा और 'हिन्दू' शब्द पर लिखे शोधपूर्ण लेख पर मीमांसक जी का सम्पादकीय विश्लेषण उनके भाषाशास्त्रीय विवेक और प्राचीन शब्दावली की गहरी समझ का परिचय देता है। वे स्पष्ट रूप से बताते हैं कि वैदिक साहित्य में प्रयुक्त अगमर्षण का अर्थ केवल शुद्धि का नियम नहीं, बल्कि दार्शनिक और सांस्कृतिक गहराई रखता है, और इसे आधुनिक संदर्भों के साथ गलत जोड़ना ऐतिहासिक भूल होगी।

जनवरी 1988 के दयानन्द विशेषांक पर उनकी समीक्षा उनके सम्पादकीय कौशल का अनूठा उदाहरण है। उन्होंने इस अंक की आवश्यकता, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, विषयवस्तु और भविष्य के शोध पर उसके प्रभाव को अत्यन्त स्पष्टता के साथ प्रस्तुत किया। वे यह भी बताते हैं कि दयानन्द विशेषांक केवल श्रद्धांजलि या व्याख्या ग्रन्थ नहीं, बल्कि दयानन्द के विचारों और उनके प्रभाव का एक सुव्यवस्थित ऐतिहासिक दस्तावेज है।

पं. विश्वनाथ विद्यामार्त्तण्ड के अथर्ववेद भाष्य पर उनकी प्रतिक्रिया यह दर्शाती है कि वे वेदभाष्यों को केवल धार्मिक ग्रन्थ के रूप में नहीं देखते थे, बल्कि उन्हें वैदिक संस्कृति के वैज्ञानिक, दार्शनिक और सांस्कृतिक आधारभूत दस्तावेज के रूप में समझते थे। वे इस बात पर विशेष बल देते हैं कि अथर्ववेद को साधारणतः जादू-टोना और तांत्रिक प्रयोगों से जोड़ने की गलत प्रवृत्ति रही है, जबकि उसका मूल स्वर विज्ञान, चिकित्सा, समाज-व्यवस्था और दैहिक-मानसिक शान्ति है।

श्रौत याग के प्रयोगों पर उनके सम्पादकीय वैदिक कर्मकाण्ड की ऐतिहासिकता और प्रामाणिक पद्धति को पुनर्स्थापित करते हैं। बहालगढ़ में श्रौत याग के पुनरुद्भव पर उन्होंने विस्तार से लिखा कि कैसे यह प्रयोग न केवल धार्मिक आस्था का प्रतीक है, बल्कि भारत की प्राचीन वैज्ञानिक परम्परा का भी जीवित रूप है।

श्रद्धानन्द बलिदान, काशी पर उसका प्रभाव, दयानन्द वेदभाष्य शताब्दी, ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका पर उनकी आलोचनाएँ तथा यज्ञों में 'अव्य.' और 'ढोंग' की परम्परा पर उनकी टिप्पणियाँ दिखाती हैं कि वे वैदिक परम्परा के समर्थक होते हुए भी उसके भीतर घुस आये पाखण्ड और अविवेक के कठोर आलोचक थे। वे यज्ञ को विज्ञान, तत्त्वज्ञान और मानवीय कल्याण के रूप में देखते थे-ढोंग, दम्भ और व्यवसाय के रूप में नहीं।

पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक का नाम आधुनिक वैदिक अध्ययन, आर्यसमाजी इतिहास-लेखन तथा व्याकरण-वेद-वाङ्मय की शोधपरक परम्परा में अत्यन्त आदर के साथ लिया जाता है। वे न केवल एक विद्वान शोधक थे, बल्कि 'वेदवाणी' मासिक के माध्यम से उन्होंने भारतीय वैदिक परम्परा, आर्य समाज के समकालीन इतिहास, प्राचीन वैदिक साहित्य, वैदिक संस्कारों तथा दयानन्द-चिन्तन जैसे अनेक क्षेत्रों को सुदृढ़ शोध-आधार प्रदान किया।

वेदवाणी के अनेक विशेषांकों में पं. मीमांसक की दृष्टि विशेष रूप से प्रकट होती है। उनके सम्पादकीयों में स्वामी दयानन्द के पत्रों, हस्तलिखित विज्ञापनों तथा दुर्लभ उपलब्ध प्रतियों पर आधारित ऐतिहासिक समीक्षा अत्यन्त मूल्यवान रूप में विद्यमान है। 1982 के एक महत्वपूर्ण सम्पादकीय में उन्होंने स्वामी दयानन्द के 26 प्रामाणिक पत्रों के प्रकाश में दयानन्द-चिन्तन, व्यक्तित्व की गहराई, तथा उनके वैचारिक विकास का अत्यन्त सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया। इन पत्रों की दुर्लभ फोटो-प्रतियों के आधार पर उन्होंने स्वामी दयानन्द के जीवन-वृत्तान्त तथा आर्य समाज की प्रारम्भिक गतिविधियों को नए ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य प्रदान किए।

दशम आर्य महासम्मेलन, हैदराबाद तथा उपदेशक महाविद्यालय जैसे प्रसंगों पर उनके विश्लेषण में एक प्रकार की इतिहास-बोधपूर्ण दृष्टि दिखाई देती है, जो न केवल घटनाओं का वर्णन करती है बल्कि समूचे आर्य समाज के विकासक्रम को भी उजागर करती है। पं. भगवतदत्त जी के निधन पर लिखी उनकी सम्पादकीय समीक्षा में उनके व्यक्तित्व, वैदिक अध्ययन-परम्परा के प्रति उनकी निष्ठा और शोध की सार्थकता को अत्यन्त संवेदनशीलता के साथ व्यक्त किया गया है। इसी प्रकार पं. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड के 'अगमर्षण संज्ञा' और 'हिन्दू' शब्द पर किये गये शोध का मीमांसक जी द्वारा किया गया सम्पादकीय मूल्यांकन उनकी भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि और ऐतिहासिक विवेक का उत्तम उदाहरण है।

वेदवाणी में प्रकाशित उनके अनेक सम्पादकीयों में दयानन्द विशेषांक की ऐतिहासिक समीक्षा, अथर्ववेद भाष्य पर पं. विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड की टीका, बहालगढ़ में प्रथम बार हुए श्रौत याग का प्रत्यक्ष विवरण, स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान का काशी पर प्रभाव, दयानन्द विज्ञापन के विभिन्न संस्करणों की तुलना, तथा दयानन्द वेदभाष्य शताब्दी सम्बन्धी समीक्षा अत्यन्त महत्वपूर्ण शोध सामग्री उपलब्ध कराती है। यज्ञों में पनप रहे अव्ययों और ढोंगात्मक प्रथाओं पर उनका समालोचनात्मक दृष्टिकोण धर्म और विज्ञान दोनों को समान रूप से आधार देता है।

पं. युधिष्ठिर मीमांसक के शोधपूर्ण लेख उनकी विद्वता का जीवंत प्रमाण हैं। वेद, व्याकरण, निरुक्त, दर्शन, दयानन्द-चिन्तन, वैदिक संस्कार, श्रौत परम्परा, वैदिक कर्मकाण्ड तथा आर्य समाज के इतिहास पर उनका लेखन अत्यन्त सुगम्भीर और तथ्याधारित है।

आदिभाषा के अपाणिनीय प्रयोगों पर उनका विश्लेषण संस्कृत व्याकरण के इतिहास को स्पष्ट करने वाला एक दुर्लभ शोध है। अमृतसर शास्त्रार्थ के प्रसंग में उन्होंने 'पौराणिक पत्र' का संदर्भ लेकर आर्य समाज और पौराणिक परम्परा के द्वंद्वात्मक संवाद को ऐतिहासिक रूप से उद्घाटित किया। संस्कार-विधि के नवीन संस्करणों के प्रति उनकी दृष्टि अत्यन्त वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक थी, जहाँ वे पात्रों की आकृति, उनके प्रयोजन और दयानन्द के निर्देशों के आधार पर उनका विश्लेषण करते हैं।

स्वामी सातवलेकर द्वारा 'हिन्दू' शब्द के संबंध में उत्पन्न व्यामोह की उनकी समीक्षा तर्कपूर्ण और

भाषा-विज्ञान पर आधारित है। 'वैदिक पाठों की समस्या' में उन्होंने विभिन्न शाखाओं, पाठभेदों और पाठ-परम्परा की विसंगतियों को शोध-दृष्टि से स्पष्ट किया। इसी प्रकार 'गौ-मांस' के आरोप पर पं. धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री की भ्रांतियों का खण्डन ऐतिहासिक और वैदिक उद्धरणों के आधार पर उन्होंने अत्यन्त स्पष्टता से किया।

पं. मीमांसक ने 'सत्यार्थ प्रकाश के इतिहास' में स्वामी दयानन्द के इस महाकृति के निर्माण-क्रम, उसके विभिन्न संस्करणों, पाठभेदों तथा प्रकाशन-विवादों को प्रामाणिक दस्तावेजों के आधार पर प्रस्तुत किया। 'अबोध निवारण' के आक्षेपों का उत्तर हो या 'आर्यों के मन्तव्य और कर्त्तव्य', हर लेख में उनकी वैचारिक दृढ़ता, भाषिक सौष्ठव तथा ऐतिहासिक विवेक समान रूप से लक्षित होता है।

उनका 'वेदार्थ की त्रिविध और चतुर्विध प्रक्रिया' विषयक विमर्श, वेद-भाष्य परम्परा का मौलिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। 'सत्यार्थ प्रकाश के पाँच पाठों पर विचार' ग्रंथ-इतिहास के अध्येताओं के लिए अत्यन्त मूल्यवान संदर्भ है। श्रौत यज्ञों की परम्परा का परिचय उन्होंने प्रायोगिक दृष्टि से भी दिया; विशेषकर आर्य समाज में पहली बार श्रौत यज्ञ के पुन: प्रयोग का वर्णन उनके प्रत्यक्ष अनुभव पर आधारित है। उनकी यात्राओं में वर्णित नीमाड़, पूना और दक्षिण भारत के प्रवास वृत्तान्त न केवल व्यक्तिगत संस्मरण हैं, बल्कि वैदिक अध्ययन, आर्य समाज के विस्तार और विभिन्न विद्वानों से उनके संवाद का महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दस्तावेज भी हैं।

इन सभी लेखों की विशेषता यह है कि मीमांसक जी जहाँ भी कोई विषय उठाते हैं, वहाँ वे सामान्य विवरण पर निर्भर न रह कर सीधे मूल-ग्रन्थों, उपलब्ध हस्तलिखित प्रमाणों, पत्रकारिक दस्तावेजों, पत्र-लेखों, ऐतिहासिक संदर्भों और वैदिक उद्धरणों के आधार पर तथ्य प्रस्तुत करते हैं। उनके समस्त लेखन में शोध की यह वैज्ञानिक पद्धति निरन्तर चलती है।

समग्रत: पं. युधिष्ठिर मीमांसक न केवल वेदवाणी के सम्पादक मात्र थे, बल्कि वैदिक साहित्य, संस्कृत व्याकरण, दर्शन, इतिहास, आर्य समाज, दयानन्द सरस्वती के जीवन और वाङ्मय के खोजपरक अध्येता भी थे। उनका लेखन गहरी शोध-दृष्टि, तथ्यनिष्ठता, प्रामाणिकता और ऐतिहासिक विवेचना की वैज्ञानिक पद्धति का प्रतिनिधि है। उनके निबन्ध और सम्पादकीय एक दस्तावेज़ की भाँति आज भी न केवल आर्य समाज के इतिहास को समझने में सहायक हैं, बल्कि वैदिक अध्ययन की शोधपरक परम्परा को दिशा देने वाले अमूल्य ग्रन्थ-सामग्री के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

वे सत्यार्थ प्रकाश से लेकर श्रौत यज्ञों तक, वेद-भाष्य परम्परा से लेकर संस्कार-विधि तक, और दयानन्द-वाङ्मय से लेकर आर्य समाज के संगठनात्मक इतिहास तक—हर क्षेत्र में अद्वितीय वैचारिक योगदान देकर भारतीय विद्वत्तापरम्परा के स्थायी स्तम्भ बन गये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *वेदवाणी, मूल ग्रन्थ मासिक पत्रिका, (सं.) पं. युधिष्ठिर मीमांसक, मार्च 1958*
2. *वेदवाणी, फरवरी 1962*

3. वेदवाणी, जनवरी, जुलाई, अक्टूबर, दिसम्बर 1966
4. वेदवाणी, फरवरी, अप्रैल, जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर 1967
5. वेदवाणी, फरवरी, मार्च, अगस्त, नवम्बर 1968
6. वेदवाणी, फरवरी, मार्च, जून, सितम्बर 1969
7. वेदवाणी, नवम्बर 1972
8. वेदवाणी, अप्रैल, जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर 1973
9. वेदवाणी, मई, सितम्बर, दिसम्बर 1975
10. वेदवाणी, दिसम्बर, 1976
11. वेदवाणी, मार्च 1977
12. वेदवाणी, जनवरी, से अक्टूबर एवं दिसम्बर 1978
13. वेदवाणी, फरवरी, अप्रैल, जुलाई, अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर, दिसम्बर 1979
14. वेदवाणी, फरवरी, 1979
15. वेदवाणी, जनवरी से दिसम्बर 1981 तक
16. वेदवाणी, जनवरी, मार्च, जून, अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर 1982
17. वेदवाणी, जून, नवम्बर 1983
18. वेदवाणी, अक्टूबर, 1984
19. वेदवाणी, मार्च, मई, जून, अक्टूबर, नवम्बर, दिसम्बर 1985
20. वेदवाणी, फरवरी से नवम्बर, 1986
21. वेदवाणी, जनवरी से जून 1987 ई.
22. वेदवाणी, फरवरी, 1987
23. वेदवाणी, सितम्बर, नवम्बर, दिसम्बर 1987
24. वेदवाणी, जनवरी से दिसम्बर 1988 तक
25. वेदवाणी, जनवरी, 1989
26. वेदवाणी, जनवरी, द्वितीय अंक, 1989
27. वेदवाणी, मार्च, 1989
28. वेदवाणी, अप्रैल, 1989
29. वेदवाणी, जून, 1989
30. वेदवाणी, जुलाई, 1989
31. वेदवाणी, अगस्त, 1989
32. वेदवाणी, मार्च, 1989

33. *वेदवाणी, जनवरी, फरवरी, जून 1981*
34. *वेदवाणी, सितम्बर, दिसम्बर, 1968*
35. *वेदवाणी, जनवरी, 1969*
36. *वेदवाणी, जून, अक्टूबर 1988*
37. *वेदवाणी, मार्च, 1977*
38. *वेदवाणी, फरवरी, 1989*
39. *वेदवाणी, अप्रैल, जुलाई 1976*
40. *वेदवाणी, मई, दिसम्बर, 1979*
41. *वेदवाणी, फरवरी, 1962*
43. *वेदवाणी, जनवरी, फरवरी 1966*
44. *वेदवाणी, जून, जुलाई अगस्त 1966*
45. *वेदवाणी, फरवरी, मार्च, जुलाई 1967*
46. *वेदवाणी, अप्रेल, जून, नवम्बर 1968*
47. *वेदवाणी, अप्रेल, नवम्बर 1969*
48. *वेदवाणी, जून, 1970*
49. *वेदवाणी, मई, जून 1975*
50. *वेदवाणी, प्रथम अंक, दिसम्बर, 1976*
51. *वेदवाणी, द्वितीय अंक, दिसम्बर, 1976*
52. *वेदवाणी, जून, 1977*
53. *वेदवाणी, अप्रैल, दिसम्बर 1978*
54. *वेदवाणी, मार्च, नवम्बर 1979*
55. *वेदवाणी, सितम्बर, नवम्बर 1982*
56. *वेदवाणी, नवम्बर, 1983*
57. *वेदवाणी, सितम्बर, 1984*